COHERENCE – The Multidisciplinary Research Journal
Volume No: 9, Issue No: 1, Year: 2018 (January-June)
PP: 45-52
ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & RefereedJournal
JournalWebsite www.coherencejournal.in

गुरु जंभेश्वर और वैष्णव धर्म दर्शन: जाम्भाणी (विश्नोई) पंथ की दार्शनिक पीठिका का सैद्धान्तिक अनुशीलन

छाया रानी

असिस्टेंट प्रोफेसर
हिंदी विभाग, दयानंद आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, मुरादाबाद

सारांश (ABSTRACT)

पन्द्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी का भारत धार्मिक समन्वय और सामाजिक संक्रमण का काल था। इसी कालखण्ड में मरुभूमि के पीपासर (नागौर) में जन्मे गुरु जंभेश्वर (जाम्भोजी, 1451-1536 ई.) ने विष्णु-भक्ति को केन्द्र में रखकर एक नैतिक, पर्यावरण-संवेदी और जीव-दया पर आधारित जीवन-पद्धति का प्रतिपादन किया। यह शोध-पत्र सैद्धान्तिक (theoretical) पद्धति से यह जाँचता है कि जम्भवाणी (शब्दवाणी) में निहित दर्शन वैष्णव धर्म-दर्शन की किन परम्पराओं से जुड़ता है, कहाँ उनका अनुसरण करता है और कहाँ अपनी मौलिक पहचान स्थापित करता है। अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि जम्भेश्वर का चिन्तन वैदिक विष्णु-तत्त्व, भागवत भक्ति और सन्त-परम्परा के सत्संग से पुष्ट है, पर आचार-प्रधानता, वृक्ष-पशु संरक्षण तथा कर्मकाण्ड-निषेध में उसकी विशिष्टता स्पष्ट दिखती है। इस अर्थ में वह "आचार-प्रधान वैष्णव भक्ति" का एक विशिष्ट रूप है।

कुंजी शब्द: जंभेश्वर, जम्भवाणी, विश्नोई पंथ, वैष्णव धर्म, भक्ति, विष्णु, नैतिक दर्शन, पर्यावरण-चेतना

1. प्रस्तावना

भारतीय धार्मिक चिन्तन की विशेषता यह रही है कि उसमें दर्शन और आचरण परस्पर अलग नहीं माने गए। वैष्णव धर्म इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, क्योंकि उसमें तत्त्वज्ञान, उपासना और जीवन-व्यवहार एक ही धारा में प्रवाहित होते हैं। बलदेव उपाध्याय ने भारतीय दर्शन की विवेचना में स्पष्ट किया है कि भक्ति-मार्ग ने दार्शनिक सिद्धान्तों को जनसामान्य की भाषा और अनुभव से जोड़ा [1]। मध्यकाल में जब उत्तर भारत राजनीतिक अस्थिरता, साम्प्रदायिक तनाव और सामाजिक विभाजन से गुज़र रहा था, तब सन्तों और भक्तों ने ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग को सरल, सर्वसुलभ और नैतिक बनाने का प्रयास किया।

इस पृष्ठभूमि में गुरु जंभेश्वर का आविर्भाव एक महत्त्वपूर्ण घटना है। मरुस्थलीय पारिस्थितिकी में पले-बढ़े इस सन्त ने विष्णु नाम-स्मरण को जीवन-शुद्धि का आधार बनाया। साथ ही उनतीस नियमों की ऐसी आचार-संहिता दी जो जीव-दया, वृक्ष-रक्षा, सत्य, शील और सन्तोष पर टिकी है। हीरालाल माहेश्वरी ने अपने शोध में जाम्भोजी की वाणी और विश्नोई सम्प्रदाय के साहित्य को राजस्थान की मध्यकालीन धार्मिक परम्परा का अनिवार्य अंग माना है [2]।

प्रश्न यह है कि क्या जम्भेश्वर का दर्शन वैष्णव धर्म का अनुवर्ती है, या वह स्वतन्त्र सन्त-परम्परा का अंग है, या दोनों का समन्वय है? यह शोध-पत्र इसी प्रश्न का सैद्धान्तिक उत्तर खोजता है।

1.1 शोध के उद्देश्य

- जम्भेश्वर के जीवन और युग का संक्षिप्त ऐतिहासिक-सांस्कृतिक विवेचन करना।
- वैष्णव धर्म-दर्शन की मूल अवधारणाओं (विष्णु-तत्त्व, भक्ति, शरणागति, अहिंसा, अवतारवाद) को रेखांकित करना।
- जम्भवाणी में निहित विष्णु-चेतना का विश्लेषण करना।

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & RefereedJournal
JournalWebsite www.coherencejournal.in

- जम्भेश्वर की दार्शनिक विशिष्टताओं को वैष्णव सम्प्रदायों एवं सन्त-परम्परा के सन्दर्भ में तुलनात्मक दृष्टि से परखना।

1.2 शोध-प्रश्न

- जम्भवाणी में ईश्वर का स्वरूप कैसा है और वह वैष्णव विष्णु-तत्त्व से कितना संगत है?
- भक्ति, ज्ञान और कर्म का समन्वय जम्भेश्वर के चिन्तन में किस रूप में आता है?
- आचार-संहिता को वैष्णव अहिंसा और भूतदया की निरन्तरता कहा जा सकता है या नहीं?

1.3 शोध-पद्धति

यह अध्ययन सैद्धान्तिक-विश्लेषणात्मक है। इसमें प्राथमिक स्रोत के रूप में जम्भवाणी (शब्दवाणी) और वैष्णव ग्रन्थ (गीता, भागवत, विष्णुपुराण, रामचरितमानस) लिए गए हैं। द्वितीयक स्रोत के रूप में हिन्दी साहित्येतिहास, भारतीय दर्शन और राजस्थान के इतिहास पर पूर्व-2018 की हिन्दी कृतियाँ ली गई हैं। विश्लेषण तुलनात्मक और पाठ-आधारित है।

2. साहित्य समीक्षा (Literature Review)

जम्भेश्वर और वैष्णव दर्शन के सम्बन्ध पर लिखा गया साहित्य तीन धाराओं में विभक्त किया जा सकता है।

(क) सन्त-साहित्य और भक्ति-आन्दोलन सम्बन्धी अध्ययन: आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति-काल को लोक-जागरण का युग माना और निर्गुण-सगुण धाराओं का विभाजन किया [3]। उनकी दृष्टि में भक्ति केवल उपासना न होकर लोकमंगल की साधना भी है। हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भक्ति-आन्दोलन को शास्त्रीय परम्परा और लोक-परम्परा के संगम के रूप में देखा और सन्तों के विचारों में नाथ, सिद्ध तथा वैष्णव प्रभावों की परस्पर क्रिया रेखांकित की [4]। पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने निर्गुण सम्प्रदाय के काव्य का विश्लेषण करते हुए उसकी दार्शनिक पृष्ठभूमि स्पष्ट की [5]। परशुराम चतुर्वेदी ने उत्तरी भारत की सन्त-परम्परा में अनेक क्षेत्रीय पंथों का उल्लेख किया, जिनमें राजस्थान के सन्त-सम्प्रदाय भी आते हैं [6]। इन विद्वानों के अध्ययन जम्भेश्वर को समझने का व्यापक परिप्रेक्ष्य देते हैं, यद्यपि इनमें जाम्भाणी पंथ पर स्वतन्त्र और विस्तृत विचार सीमित है।

(ख) वैष्णव धर्म और भारतीय दर्शन सम्बन्धी अध्ययन: बलदेव उपाध्याय ने भारतीय दर्शन में वैष्णव सम्प्रदायों के सैद्धान्तिक आधार का विवेचन किया [1]। सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने भारतीय दर्शन में भक्ति और ईश्वरवाद की दार्शनिक व्याख्या प्रस्तुत की [7]। चन्द्रधर शर्मा ने दर्शनों के आलोचनात्मक अनुशीलन में विशिष्टाद्वैत और द्वैताद्वैत जैसी वैष्णव दार्शनिक धाराओं की संक्षिप्त तुलनात्मक रूपरेखा दी [8]। दीनदयालु गुप्त ने वल्लभ सम्प्रदाय और अष्टछाप के माध्यम से वैष्णव भक्ति के साहित्यिक पक्ष को उजागर किया [9]। ये अध्ययन वैष्णव दर्शन की सैद्धान्तिक कसौटियाँ उपलब्ध कराते हैं।

(ग) जाम्भोजी और विश्नोई सम्प्रदाय पर केन्द्रित अध्ययन: हीरालाल माहेश्वरी का कार्य इस क्षेत्र में आधारभूत माना जाता है। उन्होंने जाम्भोजी के जीवन, वाणी, सम्प्रदाय और परवर्ती साहित्य का सर्वेक्षण किया [2]। जम्भवाणी (शब्दवाणी) के संस्करण मूल पाठ की उपलब्धता के प्रमुख स्रोत हैं [10]। ऐतिहासिक सन्दर्भ में विश्वेश्वरनाथ रेउ और गौरीशंकर हीराचन्द ओझा की कृतियाँ मारवाड़ और बीकानेर की राजनीतिक-सामाजिक पृष्ठभूमि स्पष्ट करती हैं [11, 12]।

समीक्षा से उभरा शोध-अन्तराल (Research Gap): अधिकांश कार्य जम्भेश्वर के जीवन-चरित, चमत्कार-आख्यान और पर्यावरणीय योगदान पर केन्द्रित हैं। वैष्णव दर्शन के साथ उनके चिन्तन की सैद्धान्तिक तुलना (ईश्वर, जीव, जगत, माया, मोक्ष और भक्ति की श्रेणियों में) पर क्रमबद्ध अध्ययन अपेक्षाकृत कम है। यह शोध-पत्र इसी अन्तराल को भरने का प्रयास है।

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & RefereedJournal
JournalWebsite www.coherencejournal.in

3. गुरु जंभेश्वर: ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

3.1 जीवन-परिचय

परम्परा के अनुसार जाम्भोजी का जन्म संवत् 1508 (1451 ई.) की भाद्रपद कृष्ण अष्टमी को नागौर क्षेत्र के पीपासर गाँव में हुआ। उनके पिता लोहटजी पँवार और माता हाँसा देवी थीं। बाल्यकाल में उनके मौन और गम्भीर स्वभाव की कथाएँ मिलती हैं। उन्होंने लगभग सात वर्ष की आयु से गो-चारण किया, और जीवन के बड़े भाग में सांसारिक बन्धनों से निर्लिप्त रहे। संवत् 1542 (1485 ई.) की कार्तिक कृष्ण अष्टमी को समराथल धोरे (बीकानेर क्षेत्र) पर उन्होंने कलश-स्थापना और पाहल-दीक्षा द्वारा पंथ का प्रवर्तन किया। संवत् 1593 (1536 ई.) में मुकाम (तालवा) में उनका निर्वाण माना जाता है [2, 10]।

ऐतिहासिक दृष्टि से यह वह काल है जब दिल्ली सल्तनत के लोदी शासक और मारवाड़-बीकानेर के राजपूत राज्य परस्पर संघर्षशील थे, और बार-बार पड़ने वाले अकालों से ग्रामीण समाज त्रस्त था [11, 12]। ऐसे वातावरण में जम्भेश्वर का सन्देश नैतिक पुनर्गठन और सामाजिक सहअस्तित्व का आह्वान था।

3.2 वाणी-स्रोत

जम्भेश्वर की वाणी "शब्द" कहलाती है और परम्परा में 120 शब्दों के रूप में संकलित मानी गई है। यह वाणी राजस्थानी-मारवाड़ी मिश्रित लोकभाषा में है। इसकी विशेषता यह है कि तत्त्वज्ञान को दैनन्दिन उपमाओं, कृषि-जीवन और मरुस्थलीय प्रतीकों के माध्यम से कहा गया है [10]। अनुयायियों में प्रचलित उनतीस नियमों की यह प्रसिद्ध दोहा-रूप स्मृति उनके समस्त आचार-दर्शन का सार प्रस्तुत करती है:

"उणतीस धर्म की आखड़ी, हृदय धरियो जोय।
जम्भेश्वर प्रसन्न होय, नाम विश्नोई होय॥" [2]

(पाठ-भेद लोक-परम्परा में मिलते हैं; यहाँ उद्धरण भावानुसार प्रचलित रूप में है।)

यहाँ "विश्नोई" संज्ञा स्वयं "बीस + नौ" (उनतीस) की संख्या-व्याख्या के साथ-साथ "विष्णु के अनुयायी" की लोक-व्युत्पत्ति से भी जुड़ती है। इसी कारण यह नाम वैष्णव-सम्बन्ध की ओर संकेत करता है।

4. वैष्णव धर्म-दर्शन: सैद्धान्तिक रूपरेखा

4.1 वैदिक विष्णु-तत्त्व

वैदिक वाङ्मय में विष्णु सर्वव्यापी तत्त्व के रूप में प्रतिष्ठित हैं। ऋग्वेद का प्रसिद्ध मन्त्र उनके परम पद की महिमा बताता है:

"तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः।
दिवीव चक्षुराततम्॥" [13]

अर्थात् ज्ञानी जन विष्णु के उस परम पद को सदा देखते हैं, जो आकाश में फैली आँख के समान सर्वत्र व्याप्त है। यहाँ विष्णु केवल देवता नहीं, परम सत्ता के प्रतीक हैं। उसी "व्यापकता" का विकास आगे चलकर पुराणों और भक्ति-साहित्य में हुआ।

4.2 भागवत धर्म और अवतारवाद

श्रीमद्भगवद्गीता में भागवत धर्म की सैद्धान्तिक पुष्टि मिलती है। धर्म-संस्थापन हेतु ईश्वर के अवतरण का सिद्धान्त इस प्रकार कहा गया है:

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥" [14]

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & RefereedJournal
JournalWebsite www.coherencejournal.in

अवतारवाद का दार्शनिक आशय यह है कि ईश्वर करुणा के कारण इतिहास में हस्तक्षेप करता है और धर्म की पुनःस्थापना करता है। जम्भेश्वर के अनुयायियों में उन्हें विष्णु का अवतार मानने की परम्परा भी इसी वैष्णव अवतार-धारणा की लोक-स्वीकृति कही जा सकती है [2]।

4.3 भक्ति और शरणागति

गीता में भक्ति की सरलता और सर्वसुलभता बार-बार रेखांकित है:

"मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः॥" [14]

और शरणागति का चरम सूत्र है:

"सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥" [14]

श्रीमद्भागवत में भक्ति का मानदण्ड सर्वभूत-दर्शन है:

"सर्वभूतेषु यः पश्येद्भगवद्भावमात्मनः।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः॥" [15]

यह श्लोक वैष्णव दर्शन की केन्द्रीय नैतिक अन्तर्दृष्टि है: ईश्वर-भक्ति का परिणाम समस्त प्राणियों में ईश्वर-दर्शन है। यही सूत्र जम्भेश्वर की जीव-दया सम्बन्धी शिक्षा का दार्शनिक आधार बन जाता है।

4.4 विष्णुपुराण में विष्णु की सर्वव्यापकता

विष्णुपुराण में विष्णु जगत् के उत्पत्ति-स्थिति-लय के आधार के रूप में वर्णित हैं और उनकी व्यापकता "विष्" धातु (व्याप्त होना) से सम्बद्ध मानी गई है [16]। इस व्युत्पत्ति में ईश्वर की अन्तर्यामिता और सर्वव्यापकता का तत्त्व निहित है, जो जम्भवाणी की ईश्वर-दृष्टि से गहरा साम्य रखता है।

4.5 मध्यकालीन वैष्णव सम्प्रदाय

मध्यकाल में वैष्णव भक्ति रामानुज (विशिष्टाद्वैत), निम्बार्क (द्वैताद्वैत), मध्व (द्वैत) और वल्लभ (शुद्धाद्वैत) जैसे दार्शनिक सम्प्रदायों में संगठित हुई [1, 8, 9]। उत्तर भारत में रामानन्द की परम्परा ने जाति-निरपेक्ष भक्ति का सन्देश फैलाया, और तुलसीदास ने सगुण राम-भक्ति में लोक-मर्यादा को प्रतिष्ठित किया [3, 17]। इस प्रकार वैष्णव धर्म में एक ओर शास्त्रीय दार्शनिक धारा थी और दूसरी ओर लोक-भक्ति की धारा। जम्भेश्वर की स्थिति इन दोनों के बीच एक लोक-निकट, आचार-प्रधान धारा की है।

5. जम्भवाणी में विष्णु-तत्त्व और ईश्वर-सम्बन्धी चिन्तन

5.1 विष्णु-नाम की केन्द्रीयता

जम्भवाणी में विष्णु का नाम ही साधना का केन्द्र है। परम्परा में प्रचलित वाणी में "विष्णु-विष्णु तू भण रे प्राणी" जैसा आह्वान मिलता है, जो नाम-स्मरण की प्रधानता को दर्शाता है [10]। यह भावना वैष्णव "नाम-जप" से सीधे जुड़ती है। इसी प्रकार तुलसीदास ने नाम की महिमा गाई है, और कबीर ने भी नाम-स्मरण को मुक्ति का साधन माना [17, 18]। अन्तर यह है कि जम्भेश्वर नाम-स्मरण को आचरण-शुद्धि से अलग नहीं करते। उनके अनुसार केवल जप पर्याप्त नहीं, जब तक जीवन में सत्य, संयम और दया न उतरे।

5.2 ईश्वर: निराकार-साकार के बीच

जम्भवाणी में ईश्वर को सृष्टिकर्ता, सर्वव्यापक और सबका नियन्ता माना गया है। यह दृष्टि सगुण-निर्गुण के कठोर विभाजन को स्वीकार नहीं करती। एक ओर "विष्णु" नाम का आग्रह वैष्णव सगुण परम्परा से

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & RefereedJournal
JournalWebsite www.coherencejournal.in

जोड़ता है। दूसरी ओर मूर्ति-पूजा, कर्मकाण्ड और आडम्बर पर अनासक्ति निर्गुण सन्त-परम्परा के निकट ले जाती है [4, 5]। इस द्वैध को "सगुण-निर्गुण समन्वय" कहा जा सकता है, जो मध्यकालीन भक्ति-आन्दोलन की सामान्य प्रवृत्ति भी रही है [3, 4]।

कबीर की वाणी इस समन्वय का सर्वज्ञात उदाहरण है:

"पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय॥" [18]

जम्भेश्वर का आग्रह भी पुस्तकीय ज्ञान से अधिक अनुभव और आचरण पर है। इसी कारण उनकी शिक्षा व्यावहारिक नैतिकता के रूप में अनुयायियों के जीवन में उतरी।

5.3 जीव और जगत्

वैष्णव दर्शन में जीव ईश्वर का अंश और जगत् ईश्वर की शक्ति का विस्तार है। गीता में ईश्वर कहते हैं: "ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः" [14]। इस दृष्टि से जीव और जगत् दोनों पवित्र हैं और उनके प्रति हिंसा ईश्वर-विरोधी आचरण है। जम्भेश्वर का आचार-दर्शन इसी तर्क पर खड़ा है। उनतीस नियमों में जीव-दया, हरे वृक्ष की रक्षा और पशु-बन्ध्याकरण का निषेध शामिल हैं। परम्परागत आख्यानों में मरुस्थलीय पारिस्थितिकी की नाज़ुकता का बोध भी झलकता है [2, 10]। इस प्रकार वैष्णव "भूतदया" यहाँ पारिस्थितिक नीति का रूप धारण करती है।

5.4 माया, कर्म और मोक्ष

वैष्णव दर्शन में माया ईश्वर की शक्ति है, जो जीव को संसार में आसक्त रखती है, और मोक्ष भक्ति तथा ईश्वर-कृपा से मिलता है [1, 7]। जम्भवाणी में सांसारिक लोभ, अहंकार और असत्य की निन्दा मिलती है। मनुष्य जीवन को क्षणभंगुर बताकर शीघ्र ही नाम-स्मरण और सद्-आचरण में लगने की प्रेरणा दी गई है [10]। यहाँ मोक्ष किसी दूरस्थ लोक की प्रतीक्षा से अधिक, शुद्ध जीवन से उपजी चित्त-शान्ति और ईश्वर-सान्निध्य के रूप में दिखता है। इस अर्थ में यह वैष्णव "जीवन्मुक्ति" की धारणा के निकट है।

6. आचार-संहिता: उनतीस नियम और वैष्णव नैतिकता

जम्भेश्वर की आचार-संहिता को सैद्धान्तिक दृष्टि से चार वर्गों में समझा जा सकता है।

(1) वैयक्तिक शुचिता: प्रातः स्नान, शील, सन्तोष, पवित्रता और जल-वाणी-ईंधन की शुद्धि (परम्परागत "पाणी, बाणी, ईंधणी, दूध फूँक कर लीजिए" भाव)। यह वैष्णव "शौच" की निरन्तरता है।

(2) आध्यात्मिक अनुशासन: सन्ध्या-उपासना, विष्णु-नाम का जप और हवन। यह वैष्णव उपासना की सरलीकृत लोक-व्याख्या है।

(3) सामाजिक नैतिकता: चोरी, निन्दा, झूठ और वाद-विवाद से बचना, और अमल, तम्बाकू, भाँग तथा मद्य का त्याग। यह वैष्णव "सात्त्विक" जीवन की अवधारणा से मेल खाता है।

(4) पर्यावरणीय-जैविक नीति: हरे वृक्ष न काटना, पशु-हिंसा से विरत रहना, बैल को बधिया न करना। यह परम्परा से भी आगे बढ़कर "भूतदया" का संस्थानीकरण है।

तुलसीदास की यह सूक्ति इस नैतिक दर्शन का सार प्रतीत होती है:

"परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥" [17]

जम्भेश्वर की आचार-संहिता "परहित" को मनुष्य तक सीमित न रखकर सम्पूर्ण जीव-जगत् तक ले जाती है। यही उसकी सैद्धान्तिक मौलिकता है।

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & RefereedJournal
JournalWebsite www.coherencejournal.in

इस नैतिक-दार्शनिक दृष्टि का ऐतिहासिक साक्ष्य संवत् 1787 (1730 ई.) की खेजड़ली घटना है। परम्परा के अनुसार अमृता देवी के नेतृत्व में खेजड़ी वृक्षों की रक्षा हेतु बड़ी संख्या में विश्नोई स्त्री-पुरुषों ने प्राणोत्सर्ग किया [2, 11]। यह घटना सिद्ध करती है कि दर्शन यहाँ पुस्तकीय सिद्धान्त नहीं, बल्कि प्राण-दायी आचरण बन गया था।

7. तुलनात्मक विश्लेषण

7.1 रामानुज के विशिष्टाद्वैत के साथ

रामानुज के अनुसार चित् (जीव) और अचित् (जगत्) ईश्वर के शरीर हैं, और ईश्वर उनका अन्तर्यामी आत्मा है [1, 8]। जम्भेश्वर ने इस सिद्धान्त का शास्त्रीय विवेचन नहीं किया, पर व्यवहार में जीव और जगत् को ईश्वर-सम्बद्ध मानकर उनकी रक्षा का आचार दिया। अतः दार्शनिक संरचना न होने पर भी व्यावहारिक निष्कर्ष विशिष्टाद्वैत के निकट पहुँचता है।

7.2 निम्बार्क के द्वैताद्वैत के साथ

द्वैताद्वैत में भेद और अभेद दोनों स्वीकार्य हैं। जम्भवाणी में ईश्वर और जीव के बीच सेव्य-सेवक भाव मिलता है, पर साथ ही ईश्वर की सर्वव्यापकता भी स्वीकार है। यह भेदाभेद-दृष्टि का लोक-संस्करण कहा जा सकता है [8]।

7.3 वल्लभ और अष्टछाप के साथ

वल्लभ सम्प्रदाय में पुष्टि-मार्ग का आधार ईश्वर-अनुग्रह है और लीला-रस की प्रधानता है [9]। जम्भेश्वर की वाणी में लीला-रस, शृंगार और माधुर्य-भाव का अभाव है। यहाँ साधना सख्य या माधुर्य की जगह मर्यादा, संयम और कर्तव्य-बोध की है। यह उन्हें वल्लभ-परम्परा से अलग करता है और रामानन्द-तुलसी की मर्यादा-परम्परा के निकट रखता है [3, 17]।

7.4 रामानन्द-कबीर परम्परा के साथ

रामानन्द ने जाति-निरपेक्ष भक्ति का सन्देश दिया और कबीर ने उसे निर्गुण स्वरूप में तीखे सामाजिक विवेक से जोड़ा [4, 5, 6]। जम्भेश्वर की वाणी में भी जाति-वर्ण की अपेक्षा आचरण को मान्यता मिलती है। विश्नोई समाज में विभिन्न जातियों के लोग सम्मिलित हुए। साथ ही उनके सम्प्रदाय में हिन्दू-मुस्लिम दोनों परम्पराओं के प्रति संवाद का स्वर मिलता है, जो मध्यकालीन सन्तों की सामान्य प्रवृत्ति थी [4, 6]।

सूरदास की यह उक्ति भक्ति में विनम्रता का भाव प्रकट करती है, जो सभी वैष्णव-परम्पराओं का साझा तत्त्व है:

"अबिगत गति कछु कहत न आवै।
ज्यों गूँगे मीठे फल को रस अन्तरगत ही भावै॥" [19]

जम्भेश्वर की शिक्षा में भी ईश्वरानुभव शब्दातीत है, पर वह आचरण में प्रकट होता है।

7.5 तुलनात्मक सारणी (संक्षेप)

बिन्दु	**वैष्णव परम्परा**	**जम्भेश्वर का दर्शन**
ईश्वर	विष्णु/नारायण, सर्वव्यापक	विष्णु-नाम, सर्वव्यापक सृष्टिकर्ता
साधना	भक्ति, नाम-जप, शरणागति	नाम-स्मरण + कठोर आचार
जीव	ईश्वर का अंश	ईश्वर-सम्बद्ध, रक्षणीय
कर्मकाण्ड	शास्त्रीय/मन्दिर-पूजा	सरल हवन-उपासना, आडम्बर-निषेध
नीति	अहिंसा, भूतदया	अहिंसा + वृक्ष-पशु संरक्षण का संस्थानीकरण
लीला-रस	कृष्ण-भक्ति में प्रमुख	अनुपस्थित

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & RefereedJournal
JournalWebsite www.coherencejournal.in

8. विश्लेषण: जम्भेश्वर और वैष्णव दर्शन का सम्बन्ध-स्वरूप

उपर्युक्त अध्ययन से तीन निष्कर्षात्मक प्रस्थापनाएँ उभरती हैं।

प्रस्थापना 1: वैष्णव सैद्धान्तिक निरन्तरता: विष्णु की केन्द्रीयता, अवतार-धारणा, नाम-स्मरण और भूतदया जैसे तत्त्व जम्भेश्वर के चिन्तन को वैष्णव परम्परा की परिधि में रखते हैं [14, 15, 16]।

प्रस्थापना 2: सन्त-परम्परा से समन्वय: कर्मकाण्ड-आलोचना, जाति-निरपेक्षता और अनुभवमूलक ज्ञान पर बल उन्हें निर्गुण सन्त-परम्परा के निकट लाता है [4, 5]। इस प्रकार उनका चिन्तन "सगुण-निर्गुण समन्वय" का उदाहरण है।

प्रस्थापना 3: आचार-प्रधान मौलिकता: अन्य वैष्णव सम्प्रदाय जहाँ तत्त्व-निरूपण या लीला-रस पर अधिक बल देते हैं, वहाँ जम्भेश्वर की मौलिकता "दर्शन को आचार-संहिता और पारिस्थितिक नीति में रूपान्तरित करने" में है [2, 10]।

यहाँ हजारीप्रसाद द्विवेदी की यह स्थापना सार्थक है कि भक्ति-आन्दोलन किसी एक परम्परा की देन न होकर अनेक धाराओं के मेल से बना [4]। जम्भेश्वर का दर्शन इसी मिश्रित परम्परा की क्षेत्रीय अभिव्यक्ति है।

9. समकालीन प्रासंगिकता

वर्तमान पर्यावरण-संकट के सन्दर्भ में जम्भेश्वर का वैष्णव-आधारित जीव-जगत् दर्शन विशेष महत्त्व रखता है। भागवत की "सर्वभूतेषु" दृष्टि [15] जब आचार-नियम बन जाती है, तब पर्यावरण-नैतिकता केवल नीति न रहकर धर्म का अंग बन जाती है। सैद्धान्तिक दृष्टि से यह दर्शाता है कि पारम्परिक धार्मिक संसाधनों से भी टिकाऊ विकास की नैतिकता निर्मित हो सकती है। इसके साथ ही व्यसन-त्याग, सत्य-निष्ठा और सन्तोष-आधारित जीवन की शिक्षाएँ आधुनिक उपभोक्तावादी समाज के लिए वैकल्पिक जीवन-दृष्टि प्रस्तुत करती हैं।

10. सीमाएँ और आगे के अध्ययन की दिशाएँ

यह अध्ययन सैद्धान्तिक है और मुख्यतः उपलब्ध मुद्रित हिन्दी स्रोतों पर आधारित है। जम्भवाणी के पाठ-भेद, राजस्थानी पाण्डुलिपियों की तुलना और क्षेत्रीय क्षेत्र-कार्य (field work) इसका अगला चरण हो सकते हैं। आगे के शोध में जाम्भाणी साहित्य के परवर्ती कवियों, उनके वैष्णव सन्दर्भों और जम्भवाणी की भाषावैज्ञानिक संरचना का अध्ययन उपयोगी रहेगा।

11. निष्कर्ष

गुरु जंभेश्वर का दर्शन वैष्णव धर्म के विष्णु-तत्त्व, भक्ति और भूतदया से अनुप्राणित है, पर वह किसी एक वैष्णव सम्प्रदाय का अनुकरण नहीं है। उसमें निर्गुण सन्तों की अनुभव-प्रधानता, कर्मकाण्ड-अस्वीकृति और सामाजिक समता का स्वर भी सम्मिलित है। उसकी विशिष्टता उनतीस नियमों के रूप में दर्शन को जीवन-पद्धति में बदल देने तथा जीव-वृक्ष-संरक्षण को धर्म का अनिवार्य अंग बना देने में है। इस प्रकार जम्भेश्वर को "आचार-प्रधान, पर्यावरण-संवेदी वैष्णव भक्ति-परम्परा" का विशिष्ट प्रतिनिधि कहा जा सकता है। उनका महत्त्व इतिहास में ही नहीं, वर्तमान की नैतिक-पारिस्थितिक चुनौतियों के उत्तर के रूप में भी बना हुआ है।

सन्दर्भ-सूची

1. उपाध्याय बलदेव. भारतीय दर्शन. वाराणसी: शारदा मन्दिर; 1957.
2. माहेश्वरी हीरालाल. जाम्भोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य. 1967.
3. शुक्ल रामचन्द्र. हिन्दी साहित्य का इतिहास. काशी: नागरी प्रचारिणी सभा; 1929.

© Copyright @ Authors

ISSN: 0976-5301
Peer Reviewed & RefereedJournal
JournalWebsite www.coherencejournal.in

4. द्विवेदी हजारीप्रसाद. हिन्दी साहित्य की भूमिका. 1940.
5. बड़थ्वाल पीताम्बरदत्त. हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय. 1946.
6. चतुर्वेदी परशुराम. उत्तरी भारत की सन्त-परम्परा. प्रयाग: लीडर प्रेस; 1951.
7. राधाकृष्णन सर्वपल्ली. भारतीय दर्शन (हिन्दी अनुवाद). दिल्ली: राजपाल एण्ड सन्ज़.
8. शर्मा चन्द्रधर. भारतीय दर्शन: आलोचन और अनुशीलन. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.
9. गुप्त दीनदयालु. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय. प्रयाग: हिन्दी साहित्य सम्मेलन; 1947.
10. जम्भवाणी (शब्दवाणी). अखिल भारतीय विश्नोई महासभा द्वारा प्रकाशित संस्करण.
11. रेउ विश्वेश्वरनाथ. मारवाड़ का इतिहास. जोधपुर; 1938.
12. ओझा गौरीशंकर हीराचन्द. बीकानेर राज्य का इतिहास. अजमेर; 1937.
13. आचार्य श्रीराम शर्मा (अनु.). ऋग्वेद संहिता. मथुरा: संस्कृति संस्थान.
14. श्रीमद्भगवद्गीता (तत्त्वविवेचनी टीका सहित), गोयन्दका जयदयाल. गोरखपुर: गीताप्रेस.
15. श्रीमद्भागवत महापुराण. गोरखपुर: गीताप्रेस.
16. श्रीविष्णुपुराण. गोरखपुर: गीताप्रेस.
17. तुलसीदास. श्रीरामचरितमानस. गोरखपुर: गीताप्रेस.
18. दास श्यामसुन्दर (सं.). कबीर ग्रन्थावली. काशी: नागरी प्रचारिणी सभा.
19. गुप्त (सं.). सूरसागर / सूर-पदावली (नागरी प्रचारिणी सभा संस्करण).

© Copyright @ Authors